International Journal of Research

International Journal of Research (IJR)
e-ISSN: 2348-6848, p- ISSN: 2348-795X Volume 2, Issue 05, May 2015
Available at http://internationaljournalofresearch.org

''लीलाधर जगूड़ी के काव्य में राजनीतिक चेतना''

राजनीति का प्रादुर्भाव समाज के विकास के साथ ही हुआ। राजनीति के द्वारा समाज का कल्याण सम्भव होता है। राजनीति अनेक प्रकार के नियमों का निर्माणक होती है। ये सभी नियम चेतना के प्रयोग द्वारा बनते और बिगड़ते रहते हैं। राज्य के सदस्य होने के नाते व्यक्ति की भलाई राजनीति से संबंधित होती है। राजनीति के अन्तर्गत यदि चेतना का सहयोग प्राप्त न हो तो व्यक्ति का कल्याण हो ही नहीं सकता। बिना राजनीति से टकराये जीवन के यथार्थ को जानना, पहचानना उसका एहसास करना भी असम्भव है। हर आदमी राजनीति से तीन रूपों में सामना करता है – एक, नागरिक की हैसियत से चुनाव आदि में हिस्सा लेकर, दूसरा–आन्दोलन में सहयोग देकर और तीसरा– दर्शक की भाँति। सामान्य व्यक्ति राज्यों की नीतियों से प्रभावित रहता है। राज्यों की गतिविधियों का प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से उस अवश्य प्रभाव पड़ता है। डॉ॰ सुषमा कहती हैं –''राज्य और उसकी विभिन्न व्यवस्थाओं का समाज और व्यक्ति दोनों पर बहुत ही प्रभाव पड़ता है और इस तरह तीनों ही व्यक्ति, समाज और राजनीति एक–दूसरे से अविंच्छिन रूप से अनुस्यूत हैं। राजनीति समाज की दशा निर्धारित करती है और समाज राजनीति की। इस प्रकार दोनों ही एक–दूसरे से प्राण–रस ग्रहण करते रहते हैं।''[1]

राजनीति में बड़ी शक्ति और बड़ी गति है। यह हमारे समग्र जीवन को मनचाहे ढंग से झकझोरती है। मोड़ती है, तोड़ती है, जोड़ती है, उर्ध्वोन्मुखी–अधोमुखी बनाती है। जो इसके अनुकूल नहीं ढ़लना चाहता, उसका मूलोच्छेद कर देने के लिए उद्यत दिखाई पड़ती है। राजनीतिक संघर्ष की अवस्था में राजनीति हमारी सभ्यता और संस्कृति, रहनी और करनी, आचार और विचार आदि सबको बड़ी गहराई से प्रभावित करती है।

राजनीति से उद्भूत कर्कश ध्वनि जहाँ एक ओर वितृष्णा फैलाती है वहीं दूसरी ओर वास्तविक जीवन–यापन के साधनों की सम्प्राप्ति हेतु प्रेरणा भी प्रदान करती है। इन क्रियाकलापों में चेतना गतिमान होती है। मानव–चेतना जब कुमार्ग ग्रहण करती है तब दूषित

राजनीति का प्रादुर्भाव होता है, परन्तु दोष–विहीन चेतना के प्रयोग द्वारा जो राजनीति संचालित होती है वह कल्याणप्रद होती है।

जगूड़ी की कविता उस आँख की दरख्वास्त है जिसमें आँसू हैं। वह उन असंख्य इन्सानों की पक्षधर्मी है जो आर्थिक दारिद्रय के दलदल को रौंद सम्भावनाओं के लोक में पहुँचने के इच्छुक हैं। इसलिए उन्होंने एक ओर व्यवस्थापक वर्ग की उन षड़यन्त्रकारी चालों, अमानुषिक हरकतों और अन्तर्विरोधात्मक आचरण को उघाड़ा है जिनसे उनके स्वार्थ–केन्द्रित रवैयों से जनसामान्य अवगत हो सके और दूसरी ओर उन अवरोधक तत्वों को भी उल्लिखित किया है जो निम्नवर्ग की स्थिति में परिवर्तन नहीं होने देते। जगूड़ी उस भ्रष्ट व्यवस्था या शोषणकामी सत्ता के खिलाफ एक क्रान्ति–धर्मी विद्रोह की आग प्रसारित करना चाहते हैं जिसके मिथ्या आश्वासनों ने जनता को इन्तजार की आग में झोंक दिया है और खुद शोषण के नए–नए तरीके अन्वेषित कर अपना उल्लू सीधा करने में व्यस्त हैं। यह अनवरत उत्पीड़न, अमानवीय शोषण, अपमान बोध तभी समाप्त हो सकता है, यदि नवीन पीढ़ी समयोचित निर्णय लेकर विद्रोह की दिशा में अग्रसर हो।

लीलाधर जगूड़ी के काव्य–संग्रह 'नाटक जारी है' से ही समकालीन हिंदी कविता जगत में जगूड़ी की पहचान बनती है। इस संग्रह की कविताओं में आज के व्यक्ति के संकट को अभिव्यक्ति मिली है। व्यक्ति के परिवेश और उसकी स्थिति को इस संग्रह की कविताओं में उजागर किया गया है –

'दुकानों पर नये चाकु बिके हैं। बदनाम मुलाकातों के कीड़े/नालियों में हिले हैं/ पैंट/फ्राक के ऊपर पड़ा है/ इधर कुछ नये अख़बार निकले हैं।' परिवेश में व्याप्त भ्रष्टाचार, अपराध, बलात्कार तथा सनसनीखेज खबरों को ये पंक्तियाँ अभिव्यक्त करती हैं। व्यक्ति की घुटन और टूटन को स्पष्ट एवं सपाट भाषा में जगूड़ी अभिव्यक्त करते हैं। आज व्यक्ति परम्परागत मूल्यों, विश्वासों, नैतिकता, राजनीति, सभी के विरुद्ध हो गया है। आज आम आदमी की स्थिति तुच्छ और निरीह हो गयी है। वह असहाय और विवश हो गया है। आज के आदमी की सही तस्वीर हमारे सामने रखते हुए जगूड़ी लिखते हैं– 'गजब है आप सो रहे हैं, अपने ही देश की तरह तटस्थ हो रहे हैं, आप के चेहरे पर कृषि प्रधान देश की पूरी भूख है।' आम आदमी की इस

स्थिति के लिए वर्तमान व्यवस्था और राजनीति जिम्मेदार है। व्यक्ति व्यवस्था के जबड़े में पड़ा हुआ ही काह रहा है– 'मैं भी तुम्हारे साथ उसी जबड़े में हूँ, जहाँ एक चढ़ाता है और दूसरा उतारता है, दांत के नीचे।' इस संग्रह की कविताओं में जगूड़ी स्थितियों को नंगा करके देखते हैं, कि –

''वह मकान जिसका द्वार आँगन के पार खुलता है,
गेहूँ के बोरों से चिन दिया गया।
लोकसभा से संयुक्त राष्ट्र–संघ तक,
हमारी कोई उपयोगिता नहीं।''[2]

''झोलों से फाइलें तक सड़कें हैं, शहर हैं,
कुर्सियों पर मरने के लिए दो बैल हैं।
तरक्की पर आदमी के साथ जोते हुए,
हमारी और क्या उपयोगिता हो सकती है,
अपने ही वंश में पैदा होते हुए।''[3]

''देखो,
इस देश की हर सड़क तिजोरी तक जाती है
और तुम्हारे लिए पोस्टकार्ड की कीमत बढ़ जाती है।''

राजनेता देश को, आम आदमी को उल्लू बना रहे हैं और लोग बनते चले जा रहे हैं – बिना किसी विरोध के। जनता पिस रही है, शोषण हो रहा है। स्वार्थी और भ्रष्ट सत्ताधीश जनता को चूसते चले जा रहे हैं। हर पाँच साल बाद होने वाले आम चुनावों को भी जगूड़ी इस नाटक का ही एक अंग मानते हैं। चुनाव नाटक है, इसलिए वह भी झूठ है जनता को उल्लू बनाने का एक तरीका। पाँच सालों के बाद जनता के सेवक हाथ जोड़कर, चेहरे पर मुस्कराहट लिए आम आदमी के सामने खड़े हो जाते हैं – विनय करते हैं, घिघियाते हैं, आश्वासानों को फिर से दुहराते हैं, यह सब नाटक नहीं तो और क्या है? चुनाव में प्रतिनिधि

International Journal of Research
International Journal of Research (IJR)
e-ISSN: 2348-6848, p- ISSN: 2348-795X Volume 2, Issue 05, May 2015
Available at http://internationaljournalofresearch.org

जनता नहीं चुनती, प्रतिनिधि चुनने का काम राजनीतिक दलों का है – जनता तो केवल मोहर लगाती है।

''सिर्फ एक लावा जो कुर्सियों के आस–पास फूटेगा,
नक्शा बदलने के लिए काफी है।
एक षड़यंत्र जो देश में ही देश के लिए किया जायेगा,
मानवता का चेहरा मोड़कर,
कोई भी तारीख ऐतिहासिक हो जाएगी।''[5]

इस तरह 'नाटक जारी है' कविता स्वतन्त्र भारत की सामाजिक ''आर्थिक–राजनीतिक स्थिति तथा व्यक्ति की नियति को हमारे सामने रखती है। यह ऐसा नाटक है जिसमें परिवेश में व्याप्त अमानवीयता और कुरूपता को उघाड़ा और उजागर किया गया है। यह नाटक बताता है कि जीवन में आत्मीयता, दया और करुणा का स्थान नहीं रहा है।

''ठीक उस समय जब पवित्र चेहरों वाले लोग,
खतरनाक विचारों से भरे हुए,
संस्कृति के हजार विनाश सुलगा कर,
उसे सम्पूर्ण मानव की तरह उड़ाना चाहते थे।''[6]

राजनीतिक दलों के पास पैसा है, पुलिस तंत्र, सैनिक–तंत्र व्यवस्था के साथ है। इसके साथ–2 बाकी सभी तंत्र भी जैसे– महाजन तंत्र, डकैत तंत्र, राजतंत्र सभी मिलकर जनता को लूट रहे हैं।

''पराजय और विनाश के बीच,
आदर्श एक चालाकी है,
लुटने के अनुशासन में, पुलिस की तरह,
सबकी वर्दी खाकी है,
X X X X
एक जगह होता है, अपराध,

International Journal of Research
International Journal of Research (IJR)
e-ISSN: 2348-6848, p- ISSN: 2348-795X Volume 2, Issue 05, May 2015
Available at http://internationaljournalofresearch.org

और दूसरी जगह जीविका दे आता है।''[7]

आज राजनीति इतनी भ्रष्ट, पतित एवं अधोमुखी हो चुकी है कि नेताओं से किसी सामाजिक सुधार, नवजागरण, मूल्यनिर्वाह की उम्मीद रखना अनर्गल एवं निरर्थक है।

''कर्त्तव्यों के पीछे सुविधा विचारते हुए
आँखों तक ऊब और व्यस्तताएँ लेकर
डींग मारते हुए
नैतिकता एक खलल रही है''[8]

आजादी के साथ व्यक्ति की बहुत सी आशाएं और अभिलाषाएँ जुड़ी हुई थी। आजाद देश में व्यक्ति सुख और शांति से रहेगा, उन्नति के द्वार सभी के लिए खुले हुए होंगे– यह आम आदमी का स्वप्न था, परन्तु वास्तविकता बिल्कुल इसके विपरीत है। इससे आम आदमी का निराश होना स्वाभाविक है। व्यक्ति की दशा सुधरने के स्थान पर निरन्तर बिगड़ती चली जा रही है। सत्तालोलुपता, भाई–भतीजावाद, स्वार्थ क्षेत्रीयता आदि ने गहरी जड़ें पा ली हैं। जगूड़ी ने इन स्थितियों तथा उनके कारणों को कविता में व्यक्त किया है –

'यहाँ से वहाँ तक चुनाव के बाद का संकट लेकर
पेट और प्रजातंत्र के बीच
आदमी दरार की तरह खड़ा है
और बवण्डर
हर दरवाजे पर
पर्दे की तरह पड़ा है।'

आजादी से पूर्व व्यक्ति में त्याग और बलिदान का भाव था, परन्तु आजादी के बाद देश भक्ति मेरे कंधे से सिर टिका कर सो गयी है।' जगूड़ी ने जो कुछ भी लिखा है उसका सीधा संबंध आज के परिवेश से है। उनकी कविता आदमी द्वारा भोगी जाने वाली असंगत स्थितियों की पीड़ा को अभिव्यक्त करती है। समाज में व्याप्त तनाव, विसंगति, अर्थशून्यता, राजनीतिक षड़यन्त्र और आदर्श शून्यता को जगूड़ी उघाड़ते हैं, वास्तविकता को उजागर करते हैं।

International Journal of Research
International Journal of Research (IJR)
e-ISSN: 2348-6848, p- ISSN: 2348-795X Volume 2, Issue 05, May 2015
Available at http://internationaljournalofresearch.org

वे देते हैं केवल आश्वासन और सहानुभूति, ध्यान नहीं, क्योंकि आज ध्यान का पतन हो चुका है। प्रस्तुत उदाहरण राजनीति के भ्रष्ट और पतित स्वरूप का साक्ष्य है –

''क्योंकि जिसने जब भी दिया, आश्वासन दिया, और
अगर 'ध्यान' दे दिया तो रहा ही क्या अपने पास,
होता है राजनीति में इसी तरह होता है, ध्यान का पतन,
क्योंकि आप पतित से पतित लोगों तक पहुँचना चाहते हैं,
ध्यान रक्खें अपने पास, अपना ही ध्यान रक्खे/अपना ही ध्यान रक्खें,
मेरे भी ध्यान से ऊपर, यह हुई राष्ट्रीय तकलीफ।''[9]

राजनीतिज्ञ सड़कों, घरों, कपड़ों, पौष्टिक आहार की सुविधाओं के मिथ्या आश्वासनों से जनता की वोट तो खरीदते ही हैं, इसके साथ–2 वे चुनाव जीतने के लिए निम्नस्तरीय तरीकों को इस्तेमाल करने से नहीं चूकते। अग्रलिखित उदाहरण में आधुनिक जननायकों के डुप्लीकेट व्यक्तित्व, अवसरवादी दृष्टिकोण, आत्मकेन्द्रित चिंतन और चारित्रिक अन्तर्विरोधी पहलुओं का स्वरूप देखा जा सकता है –

''सब कुछ बिल्कुल तैयार है, सड़कें, घर, कपड़े–पौष्टिक आहार, देखने के लिए कई मधुर सपने, यहाँ तक कि आनन्दित होने का भी इन्तजाम है।''

तुमको कुछ नहीं करना पड़ेगा,
हमें लागु करने भर का मौका दें,
प्रधानमंत्री कह दें और मजाल है सूर्य इधर न आए।''[10]

आनन्दित का इन्तजाम है' पंक्ति में राजनीतिज्ञों के घृणित रवैये पर करारा व्यंग्य है।

''कानून की सर्वोच्च पवित्रता लेकर
हमारे पास आएँगे
'ऐसी प्रधानमंत्री की इच्छा है' – वे कहेंगे
तुम हमें चुनो
हम सब कुछ बदलकर रख देंगे,
उसके बाद भी अगर कोई भूख की बात करे

International Journal of Research
International Journal of Research (IJR)
e-ISSN: 2348-6848, p- ISSN: 2348-795X Volume 2, Issue 05, May 2015
Available at http://internationaljournalofresearch.org

तो यह प्रधानमंत्री को सहन नहीं होगा।''[11]

जनता को आशा थी कि वे (नेतागण) आएंगे और सब कुछ बदलकर रख देगें, पर उनके आश्वासन शब्द नहीं बल्कि शासन के चरित्र की गुफाएँ हैं जहाँ अन्धकार केवल जनता को निगल रहा है, उन्हें और गरीब बनाने की ओर अग्रसर है और आम आदमी उनकी आँतों के अंधेरे में ग्रास की तरह मल होने को गुजर रहे हैं। जगूड़ी ने व्यवस्था के कोरे आश्वासनों पर, उनकी शोषकी नीतियों पर, उनके छद्मवेशी सिद्धान्तों पर तीखा व्यंग्य किया है। यह व्यंग्य शोषण वर्ग की नीतियों को तो अनावृत करता ही है, पर इसके साथ–2 शोषित वर्ग में भी नैतिक बल का संचरण करता है। कवि ने व्यवस्था के घिनौने व्यक्तित्व की तमाम परतों को इस सीमा तक अनावृत कर दिया है कि सामान्य व्यक्ति सत्तासीन व्यक्तियों के विरूद्ध जनमत तैयार कर जूआ फेंकने को तत्पर हो जाए।

जहाँ रिश्वत का बाजार गर्म हो, व्यवस्था का लगीाग हर प्राणी चोर हो और जहाँ आदमी को अपनी भूलों पर पश्चाताप करने की जरूरत न हो, वहाँ कानून की स्थिति का संदिग्ध होना कोई नामुमकिन बात नहीं है। न्यायाधीश, उच्चस्तरीय वकील प्राय अभिजात वर्ग से सम्बद्ध होते हैं। उन तक शोषित सर्वहारा वर्ग की पहुँच नहीं हो पाती। इसके विरीत मिलमालिकों/उद्योगपतियों/सूदखोरों/साहूकारों में न्यायाधीशों की जेब भरने की सामर्थ्य होती है। इसलिए कानून की जड़ पुस्तकों में नहीं बल्कि बटुवे में होती है।

''सब कुछ के बाद एक गलत जिक्र की तरह,
हमारा होना, हम कच्चे पड़ गए हैं,
कानून की जड़ बटुवे में लेकर, ये सब लोग,
इस सारी व्यवस्था के साथ सच्चे पड़ गए हैं।''[12]

जहाँ कानून की पुस्तकों के प्रति अविश्वास हो, जहाँ संविधान के पृष्ठ जलाकर किसी षड़यंत्र की साजिश की जा रही हो, जहाँ विरोधी प्रस्ताव के मूल में जनहित नहीं बल्कि निजी स्वार्थ की बात निहित हो वहाँ कानून की स्थितिसमादृत कैसे हो सकती है –

''परसों कानून की किताब के कुछ और पेज जला दूँगा,
लोकसभा के पीछे, खुद के विरूद्ध,

अविश्वास प्रस्ताव रखूँगा और पास कर दूँगा,
किसी षड़यंत्र के लिए,
अपना निर्वाचन।''[13]

कितनी विडम्बनापरक स्थिति है जब सुनवाई के सभी द्वार संदिग्ध हों और कानून के पृष्ठों के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव केवल षड़यंत्रों के लिए रखे जाते हों?

पूँजीवादी व्यवस्था प्रायः नीतियों और अध्यादेशों के परिपालन हेतु पुलिस का सहयोग लेती है। यद्यपि ये पुलिसकर्मी सर्वहारा वर्ग से आते हैं शक्ति और नशे में चूर ये शोषक, शोषक वर्ग से भी कहीं अधिक क्रूर और बर्बर सिद्ध होते हैं। जहाँ भी किसी विद्रोह या हड़ताल की आशंका हो, कोई भाषायी या साम्प्रदायिक उपद्रव मुंह खोलता हो, वहीं पुलिस कर्मियों की विभीषिकापूर्ण कार्यवाही की शुरुआत हो जाती है। वस्तुतः अपनी इसी अमानुषिकता के कारण वे आम जनता के विश्वस्त या हितचिन्तक बनने की अपेक्षा पूंजीवादी वर्ग के पक्षधर सिद्ध होते हैं।

'बच्चा और राजनीति' (घबराए हुए शब्द) भेद, हत्या (रात अब भी मौजूद है), इस व्यवस्था में (नाटक जारी है) आदि रचनाओं में पुलिस कर्मियों के बर्बर अत्याचारों, अमानुषिक कृत्यों एवं अमानुषिक रवैयों के संकेत हैं। 'भेद' कविता में पुलिस की बर्बरता, क्रूरता और मूल्यभंजक मानसिकता का रहस्योद्घाटन है। अगर कोई पुलिसकर्मी आंतरिक स्नेह, सौजन्य या आत्मीयता का प्रदर्शन करता है तो यह केवल स्वप्न में ही संभव है। 'पुलिस हंस रही है ! पुलिस हंस रही है।''[14]

''मैं कल भी झूठ बोलूगाँ, अमर्यादित होना,
पाप मुक्ति के लिए, अनिवार्य प्रार्थना है
किसी का पीछा करता हुआ, थाने के सामने से गुजर जाऊँगा।[15]

पुलिस–कर्मियों का दायित्व होता है व्यवस्था स्थापन में सत्ता का सहयोगी होकर सामान्य जनता के लिए रक्षाकवच सिद्ध होना –

''संगीन पुलिस किसी रंगीन अपराधी को पकड़ती है,
और मुझे अपने देश के दिमाग पर खुशी होती है,
चकमे बाजियाँ बतायेंगी कि प्रतिभाएँ,

e-ISSN: 2348-6848, p- ISSN: 2348-795X Volume 2, Issue 05, May 2015
Available at http://internationaljournalofresearch.org

प्रजातंत्र में अपराध करती हैं।''[16]

जगूड़ी समकालीन कविता के उन हस्ताक्षरों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिन्होंने भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, यथास्थितिवाद के समर्थक बिचोलियों, पुलिसकर्मियों, मूल्यभंजक सत्ताधारियों के आचरण को उद्घाटित करने में लेखकीय दायित्व का निर्वाह किया है। जगूड़ी की कविता व्यवस्था, राजनीति चरित्र, जनतंत्र का यथार्थ रूप, जनता का स्वर और प्रतिक्रिया आदि के यथार्थ को स्पष्ट करने का, उनके सही रूप को सामने रखने का प्रयास करती है। जगूड़ी की कविता आम आदमी की व्यथा और करुणा को, परिवेश के यथार्थ को अपनी व्यंग्य–विद्रूप भरी उक्तियों से अभिव्यक्त करती है इस अभिव्यक्ति में परिवर्तन और बदलाव की, विद्रोह की ओर संघर्ष की इच्छा भी नज़र आती है।

संदर्भ :

1. डॉ॰ सुषमा, उपन्यास और राजनीति, पृ. 23
2. लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 59
3. वही, पृ. 44
4. लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 48
5. लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 44
6. लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 47
7. लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 57
8. वही, पृ. 52
9. लीलाधर जगूड़ी, रात अब भी मौजूद है, पृ. 75
10. लीलाधर जगूड़ी, इस यात्रा में, पृ. 106
11. लीलाधर जगूड़ी, इस यात्रा में, पृ. 106
12 लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 60
13 लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 58
14 लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 58
15 लीलाधर जगूड़ी, रात अब भी मौजूद है, पृ. 15
16 लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ. 58

शोधार्थी
अनीता
पी–एच॰डी॰ (हिन्दी)
म0 द0 वि0 विद्यालय, रोहतक।
मो0 नं0 : 09671918515